

आचार्य जे. बी. कृपलानी का गांधीवादी समाजवाद, ग्राम स्वराज और विकेंद्रीकरण: स्वतंत्र भारत के विकास-विमर्श का एक वैकल्पिक दृष्टिकोण

¹प्रीति, ²डॉ. कुमारी सुमन

¹शोधार्थी, ²सहायक प्रोफेसर

¹²इतिहास विभाग

¹²बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर, रोहतक, हरियाणा

सारांश—आचार्य जे. बी. कृपलानी भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के उन नेताओं में थे जिनकी राजनीतिक पहचान केवल कांग्रेस संगठन या स्वतंत्रता संघर्ष तक सीमित नहीं रही। स्वतंत्रता के बाद उनके विचार विशेष रूप से ग्राम स्वराज, विकेंद्रीकरण, छोटे और कुटीर उद्योग, आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक समानता तथा नैतिक राजनीति के प्रश्नों पर अधिक स्पष्ट होकर सामने आए। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य कृपलानी के गांधीवादी समाजवाद और विकेंद्रीकृत विकास संबंधी विचारों का विश्लेषण करना है। अध्ययन का आधार शोध-प्रबंध में उपलब्ध वैचारिक विवेचन, कृपलानी के राजनीतिक हस्तक्षेपों का ऐतिहासिक संदर्भ तथा गांधीवादी लोकतंत्र और ग्रामीण विकास पर उपलब्ध शोध-साहित्य है। लेख यह दिखाता है कि कृपलानी ने गांधी के विचारों को यांत्रिक रूप से नहीं अपनाया, बल्कि उन्हें स्वतंत्र भारत की नई राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं के संदर्भ में पुनः व्याख्यायित किया। उनके लिए ग्राम स्वराज केवल प्रशासनिक विकेंद्रीकरण नहीं था; यह स्थानीय समुदायों की निर्णय-क्षमता, आर्थिक आत्मनिर्भरता, उत्तरदायित्व और सामाजिक न्याय से जुड़ा व्यापक विचार था। नेहरू के केंद्रीकृत औद्योगिक विकास मॉडल से उनका मतभेद इसी वैकल्पिक दृष्टि से जुड़ा था। लेख अंत में इस बात पर विचार करता है कि पंचायती राज, स्थानीय भागीदारी, टिकाऊ विकास और ग्रामीण रोजगार की समकालीन बहसों में कृपलानी की विचारधारा को किस सीमा तक ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक संदर्भ के रूप में पढ़ा जा सकता है।

मुख्य शब्द—जे. बी. कृपलानी, गांधीवाद, ग्राम स्वराज, विकेंद्रीकरण, गांधीवादी समाजवाद, ग्रामीण विकास, नैतिक राजनीति

I. प्रस्तावना

आचार्य जे. बी. कृपलानी का सार्वजनिक जीवन बीसवीं शताब्दी के भारतीय इतिहास के कई निर्णायक चरणों से जुड़ा रहा। वे शिक्षक, स्वतंत्रता सेनानी, कांग्रेस के संगठनकर्ता, कांग्रेस अध्यक्ष, सांसद और बाद में विपक्षी राजनीति के प्रमुख स्वर के रूप में सक्रिय रहे। किंतु उनके राजनीतिक जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष उनकी वैचारिक निरंतरता थी। स्वतंत्रता के बाद जब भारतीय राज्य ने योजनाबद्ध औद्योगिकीकरण, बड़े सार्वजनिक उपक्रमों और केंद्रीकृत प्रशासनिक संरचना को विकास का प्रमुख आधार बनाया, तब कृपलानी ने गांधीवादी दिशा की ओर लौटने का आग्रह किया। शोध-प्रबंध में उनके विचारों को गांधीवाद, समाजवाद, विकेंद्रीकरण, आर्थिक आत्मनिर्भरता और जमीनी लोकतंत्र के मिश्रित रूप के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस दृष्टि में गाँव राष्ट्रीय जीवन की परिधि पर स्थित इकाई नहीं, बल्कि लोकतंत्र और अर्थव्यवस्था की बुनियादी इकाई था।

कृपलानी का गांधीवाद केवल प्रतीकों तक सीमित नहीं था। वे खादी, कुटीर उद्योग, पंचायत, ग्राम स्वराज, अहिंसा और सार्वजनिक जीवन में सादगी को एक-दूसरे से जुड़े तत्व मानते थे। यह संबंध इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि उनके लिए राजनीतिक लोकतंत्र तभी सार्थक हो सकता था जब आर्थिक और प्रशासनिक शक्ति भी नीचे तक वितरित हो। गांधीवादी विकेंद्रीकरण पर उपलब्ध अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि ग्राम स्वराज का आशय केवल स्थानीय

निकायों की स्थापना तक सीमित नहीं है, बल्कि निर्णय-निर्माण और स्थानीय संसाधनों के प्रबंधन में समुदाय की वास्तविक और प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित करना भी इसका महत्वपूर्ण आधार है (माथुर; 2015; खिमटा; 2021)। नागरिक-केंद्रित प्रशासन पर किए गए अध्ययनों में भी विकेंद्रीकरण को लोकतांत्रिक प्रक्रिया की गहराई, उत्तरदायित्व और जनभागीदारी से जोड़ा गया है (खुंद्रकपम एवं सरमा; 2023)।

इस शोध-पत्र का केंद्रीय प्रश्न यह है कि कृपलानी की ग्राम स्वराज और गांधीवादी समाजवाद संबंधी अवधारणा स्वतंत्र भारत के विकास-विमर्श में किस प्रकार एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। साथ ही यह भी देखा गया है कि उनके विचारों में आर्थिक न्याय, रोजगार, स्थानीय उत्पादन, राजनीतिक उत्तरदायित्व और पर्यावरणीय संतुलन किस प्रकार एक-दूसरे से जुड़े दिखाई देते हैं।

II. अध्ययन का उद्देश्य और पद्धति

यह अध्ययन ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक और व्याख्यात्मक प्रकृति का है। इसका मुख्य स्रोत संबंधित शोध-प्रबंध है, जिसमें कृपलानी की वैचारिक यात्रा, ग्राम स्वराज, आर्थिक सोच, नेहरूवादी मॉडल की आलोचना, पंचायती राज और समकालीन प्रासंगिकता पर विस्तृत सामग्री दी गई है। इस सामग्री को गांधीवादी लोकतंत्र, ग्रामीण स्वशासन, सर्वोदयी अर्थव्यवस्था और विकेंद्रीकरण से संबंधित शोध-पत्रों के साथ पढ़ा गया है। उद्देश्य किसी एक विकास मॉडल को श्रेष्ठ घोषित करना नहीं, बल्कि कृपलानी के वैचारिक तर्क की संरचना को समझना है।

शोध-पत्र में तीन स्तरों पर विश्लेषण किया गया है। पहला, कृपलानी के गांधीवाद और समाजवाद के संबंध को समझना; दूसरा, ग्राम स्वराज और विकेंद्रीकरण के उनके विचार का राजनीतिक और आर्थिक अर्थ स्पष्ट करना; और तीसरा, स्वतंत्र भारत के केंद्रीकृत विकास मॉडल के संदर्भ में उनकी आलोचना की ऐतिहासिक भूमिका को देखना। समकालीन प्रासंगिकता की चर्चा करते समय वर्तमान नीतियों का मूल्यांकन नहीं किया गया है; केवल यह बताया गया है कि आज के शोध-साहित्य में किन प्रश्नों पर गांधीवादी विचार फिर से उपयोगी विश्लेषणात्मक संदर्भ बनते हैं।

III. कृपलानी का गांधीवाद: अनुकरण नहीं, वैचारिक आत्मसात

कृपलानी का गांधी से निकट संबंध चंपारण के दौर से विकसित हुआ। शोध-प्रबंध में यह स्पष्ट किया गया है कि उन्होंने अहिंसा और सत्याग्रह को केवल नैतिक आदर्श के रूप में नहीं देखा, बल्कि जन-राजनीति की एक प्रभावी पद्धति के रूप में समझा। यही अनुभव बाद में उनके राजनीतिक विचारों की नींव बना। उनके लिए गांधीवाद जीवन के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक क्षेत्रों को अलग-अलग नहीं करता था। इसलिए खादी, ग्राम स्वराज, सामाजिक समानता, स्वावलंबन और सार्वजनिक नैतिकता उनके विचार में एक समेकित ढाँचे का हिस्सा बने।

समकालीन शोध गांधीवादी लोकतंत्र को प्रतिनिधिक संस्थाओं से आगे बढ़कर सहभागी और स्थानीय लोकतंत्र से जोड़ता है। पराशर (2022) ने स्पष्ट किया है कि गांधी से प्रभावित भारतीय राजनीतिक चिंतन में संसद और प्रतिनिधित्व के साथ-साथ स्थानीय समुदायों की निर्णय-प्रक्रिया को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। इसी प्रकार पाटिल और सिन्हा (2022) ने ग्राम-स्तरीय सहभागी शासन के एक आधुनिक उदाहरण के माध्यम से यह दिखाया कि सामुदायिक सहमति, स्थानीय संसाधनों पर नियंत्रण और समुदाय-आधारित निर्णय-प्रक्रिया को गांधीवादी स्वराज की अवधारणा से जोड़ा जा सकता है। कृपलानी के विचारों को भी इसी व्यापक वैचारिक परंपरा के अंतर्गत

समझा जा सकता है, जिसमें लोकतंत्र को केवल प्रतिनिधिक संस्थाओं तक सीमित न मानकर स्थानीय सहभागिता, सामुदायिक स्वायत्तता और विकेंद्रीकृत निर्णय-प्रक्रिया से जोड़ा गया है।

कृपलानी का गांधीवाद अतीत में लौटने का आग्रह नहीं था। शोध-प्रबंध के अनुसार वे विज्ञान और आधुनिक ज्ञान का विरोध नहीं करते थे; उनका प्रश्न यह था कि तकनीक और आर्थिक नीति का अंतिम लाभ किसे मिलता है। इसी कारण वे मानव-केन्द्रित विकास पर जोर देते थे। उनके लिए तकनीक का उद्देश्य मनुष्य की सहायता करना था, न कि श्रम को अनावश्यक बनाकर बड़ी संख्या में लोगों को उत्पादन प्रक्रिया से बाहर करना। यह दृष्टि गांधीवादी आर्थिक चिंतन के उस तत्व से मेल खाती है जिसमें उत्पादन के आकार, उपभोग और सामाजिक न्याय के बीच संबंध पर जोर दिया जाता है (शर्मन; 2016)।

IV. गांधीवादी समाजवाद और सर्वोदयी अर्थव्यवस्था

कृपलानी के समाजवाद की एक विशिष्टता यह थी कि वह राज्य-नियंत्रित केंद्रीकृत समाजवाद से अलग था। वे आर्थिक असमानता, शोषण और पूँजी के अत्यधिक संकेंद्रण के आलोचक थे, लेकिन समाधान के रूप में राज्य की असीमित आर्थिक शक्ति को भी स्वीकार नहीं करते थे। उनके विचार में सामाजिक न्याय का आधार स्थानीय उत्पादन, सहकारिता, छोटे उद्योग, कृषि, न्यूनतम असमानता और नैतिक उत्तरदायित्व होना चाहिए। इस कारण उनके विचार को गांधीवादी समाजवाद या सर्वोदयी समाजवाद के रूप में समझा जा सकता है।

सर्वोदय की अवधारणा उनके लिए 'सबके विकास' से जुड़ी थी, पर इसका अर्थ समान भौतिक संपत्ति की यांत्रिक व्यवस्था नहीं था। यह ऐसी सामाजिक संरचना की कल्पना थी जिसमें गरीब, किसान, मजदूर और हाशिये के समूह गरिमापूर्ण जीवन जी सकें। इस दृष्टि में आर्थिक निर्णय का मूल्यांकन केवल उत्पादन-वृद्धि से नहीं, बल्कि रोजगार, समानता, आत्मनिर्भरता और सामाजिक प्रभाव से होना चाहिए। शर्मन (2016) ने स्वतंत्रता के बाद सर्वोदयी आर्थिक चिंतन की भूमिका का विश्लेषण करते हुए स्पष्ट किया है कि नेहरूवादी राज्य-केंद्रित विकास दृष्टि के समानांतर गैर-राज्यवादी, विकेंद्रीकृत और समुदाय-आधारित आर्थिक चिंतन भी सक्रिय रूप से विद्यमान था। कृपलानी की आर्थिक दृष्टि को भी इसी व्यापक वैचारिक प्रवाह के अंतर्गत समझना उपयोगी है।

न्यासिता के सिद्धांत पर चक्रवर्ती (2014) का अध्ययन गांधीवादी आर्थिक चिंतन के उस प्रयास को रेखांकित करता है, जिसमें संपत्ति, पूँजी और उद्यम को सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ने का प्रयास किया गया था। कृपलानी भी आर्थिक शक्ति को नैतिक नियंत्रण से स्वतंत्र नहीं मानते थे। उनका मत था कि अर्थव्यवस्था का मूल उद्देश्य मनुष्य और समाज की सेवा होना चाहिए तथा आर्थिक विकास से प्राप्त लाभ समाज के निम्न और वंचित वर्गों तक पहुँचना चाहिए। इस दृष्टि से उनका आर्थिक चिंतन राज्य और बाजार—दोनों में शक्ति के अत्यधिक केंद्रीकरण के प्रति सावधान करता है और विकेंद्रीकृत, उत्तरदायी तथा मानवीय अर्थव्यवस्था का समर्थन करता है।

V. ग्राम स्वराज: लोकतंत्र की बुनियादी इकाई

कृपलानी के राजनीतिक दर्शन में ग्राम स्वराज केंद्रीय स्थान रखता था। शोध-प्रबंध के अनुसार वे गाँव को केवल कृषि उत्पादन की जगह नहीं, बल्कि एक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समुदाय के रूप में देखते थे।

ग्राम स्वराज का अर्थ था कि गाँव अपनी स्थानीय आवश्यकताओं से संबंधित निर्णय स्वयं कर सके, स्थानीय संसाधनों की प्राथमिकता तय कर सके और अपनी बुनियादी अर्थव्यवस्था में पर्याप्त आत्मनिर्भरता विकसित करे।

यह अवधारणा प्रशासनिक विकेंद्रीकरण से आगे जाती है। प्रशासनिक विकेंद्रीकरण में ऊपर की सरकार कुछ कार्य नीचे की संस्थाओं को सौंप देती है, जबकि ग्राम स्वराज में निर्णय-शक्ति नीचे से ऊपर निर्मित होती है। खिमटा (2021) ने गांधीवादी विकेंद्रीकरण को राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक—तीनों आयामों से जोड़ा है। माथुर (2015) भी बताती हैं कि गांधी का लोकतंत्र शक्तियों के वितरण तथा ग्राम-स्तरीय जनभागीदारी पर आधारित था। ली (2008) ने ग्राम स्वराज और पंचायती राज के वैचारिक संबंध का विश्लेषण करते हुए स्पष्ट किया कि गांधी का ग्राम-गणराज्य संबंधी विचार बाद में स्थानीय स्वशासन से जुड़ी बहसों के लिए एक प्रभावशाली वैचारिक आधार बना।

कृपलानी की दृष्टि में ग्राम स्वराज का एक व्यावहारिक पक्ष भी था। वे स्थानीय संस्थाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, सिंचाई, रोजगार, स्थानीय न्याय और संसाधन-प्रबंधन से जोड़ना चाहते थे। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण था क्योंकि उनके अनुसार दूर स्थित प्रशासन स्थानीय समस्याओं की विविधता को पूरी तरह नहीं समझ सकता। आज के विकेंद्रीकरण संबंधी शोध में भी स्थानीय ज्ञान और स्थानीय राजनीतिक संबंधों को नीतिगत परिणामों के लिए महत्वपूर्ण माना गया है। ग्रामीण भारत में विकेंद्रीकृत कार्यक्रमों के अध्ययन दिखाते हैं कि स्थानीय भागीदारी के परिणाम संस्थागत संरचना और स्थानीय शक्ति-संबंधों पर निर्भर करते हैं। इसलिए कृपलानी की अवधारणा को केवल आदर्शवाद के रूप में पढ़ने के बजाय स्थानीय शासन की क्षमता, संसाधन और जवाबदेही से जोड़कर देखना अधिक उपयुक्त है।

VI. पंचायती राज और स्थानीय उत्तरदायित्व

कृपलानी की सोच में पंचायत केवल प्रशासनिक एजेंसी नहीं थी। पंचायत स्थानीय लोकतंत्र का वह मंच थी जहाँ नागरिक प्रतिनिधि से सीधे प्रश्न कर सकता है और सामुदायिक प्राथमिकताओं पर चर्चा हो सकती है। उनकी चिंता यह थी कि यदि पंचायतों के पास वास्तविक वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार न हों, तो विकेंद्रीकरण केवल कागजी रह जाएगा। इस विचार की प्रतिध्वनि आधुनिक शोध में भी दिखाई देती है। खुंद्रकपम और सरमा (2023) ने नागरिक-केंद्रित प्रशासन को प्रभावी बनाने के लिए राजनीतिक, प्रशासनिक तथा न्यायिक विकेंद्रीकरण की आवश्यकता पर बल दिया। बोरा (2012) ने पंचायती राज की व्यावहारिक सीमाओं को ग्राम स्वराज की अधूरी परियोजना के रूप में देखा।

कृपलानी का स्थानीय उत्तरदायित्व संबंधी तर्क भी उल्लेखनीय है। उनका मानना था कि स्थानीय प्रतिनिधि जनता के निकट रहता है, इसलिए उसकी जवाबदेही प्रत्यक्ष होती है। केंद्रीय सत्ता में निर्णय की दूरी बढ़ने पर नागरिक की प्रभाव-क्षमता कम हो सकती है। यह विचार आधुनिक सहभागी लोकतंत्र की उस धारणा से मेल खाता है जिसमें राजनीतिक भागीदारी को केवल मतदान तक सीमित नहीं माना जाता। पाटिल और सिन्हा (2022) का अध्ययन दर्शाता है कि ग्राम सभा, सामुदायिक सहमति और स्थानीय संस्थाओं की सक्रिय भागीदारी समुदाय को केवल लाभ प्राप्त करने वाला पक्ष न बनाकर निर्णय लेने की प्रक्रिया में एक प्रभावी भागीदार और निर्णयकर्ता बना सकती है।

VII. खादी, कुटीर उद्योग और रोजगार का प्रश्न

कृपलानी के लिए खादी एक सांस्कृतिक प्रतीक भर नहीं थी। यह स्थानीय उत्पादन, रोजगार, श्रम की गरिमा और आर्थिक आत्मनिर्भरता का माध्यम थी। वे मानते थे कि भारत जैसे श्रम-प्रधान देश में ऐसे उद्योगों की आवश्यकता है जो कम पूँजी में अधिक लोगों को काम दें। बड़े औद्योगिक संयंत्र उत्पादन बढ़ा सकते हैं, पर यदि वे व्यापक रोजगार न दें तो विकास का सामाजिक लाभ सीमित रह सकता है—यह उनकी प्रमुख चिंता थी।

गांधीवादी आर्थिक विचार पर आधुनिक शोध में भी रोजगार, स्थानीय उत्पादन और समावेशन की चर्चा मिलती है। कुमार (2024) ने विकेंद्रीकृत ग्रामीण विकास को टिकाऊ जीवन-शैली और स्थानीय संसाधन प्रबंधन से जोड़ा है। आधुनिक संदर्भ में कुटीर उद्योग का अर्थ पुराने उत्पादन रूपों की हूबहू पुनरावृत्ति नहीं, बल्कि स्थानीय मूल्य-वर्धन, सूक्ष्म उद्यम, सहकारिता और विकेंद्रीकृत उत्पादन के नए रूपों से भी जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार कृपलानी का आग्रह तकनीक-विरोध की तुलना में रोजगार और मानवीय पैमाने के प्रश्न पर अधिक केंद्रित दिखाई देता है।

VIII. केंद्रीकृत औद्योगीकरण पर कृपलानी की आलोचना

कृपलानी और नेहरू के बीच मतभेद को व्यक्तिगत प्रतिस्पर्धा के रूप में नहीं, बल्कि विकास की दो अलग अवधारणाओं के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। नेहरू का मॉडल भारी उद्योग, वैज्ञानिक नियोजन, सार्वजनिक क्षेत्र और बड़े बुनियादी ढाँचे पर आधारित था। कृपलानी की चिंता थी कि अत्यधिक केंद्रीकरण से नौकरशाही बढ़ेगी, स्थानीय भागीदारी घटेगी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पीछे रह जाएगी।

इस बहस का संतुलित मूल्यांकन आवश्यक है। स्वतंत्र भारत के सामने औद्योगिक आधार, ऊर्जा, परिवहन और रक्षा उत्पादन जैसी वास्तविक आवश्यकताएँ थीं, इसलिए बड़े उद्योगों की आवश्यकता को पूरी तरह नकारना ऐतिहासिक संदर्भ को सरल बना देगा। दूसरी ओर कृपलानी की आलोचना इस प्रश्न को जीवित रखती है कि औद्योगीकरण का सामाजिक वितरण कैसा होगा, विस्थापन का भार किस पर पड़ेगा और रोजगार की संरचना कैसी बनेगी। उनके विचार का महत्व इस बात में है कि उन्होंने विकास को केवल उत्पादन के आँकड़ों से नहीं, बल्कि मनुष्य और समुदाय के अनुभव से देखने का आग्रह किया।

IX. विकास, पर्यावरण और मानवीय पैमाना

शोध-प्रबंध में कृपलानी के बड़े बाँधों और अत्यधिक केंद्रीकृत परियोजनाओं के प्रति संदेह को विस्थापन, स्थानीय संसाधनों और सामाजिक न्याय के संदर्भ में रखा गया है। यह दृष्टि आज के पर्यावरण-विकास विमर्श से जोड़ी जा सकती है, लेकिन सावधानी के साथ। उन्हें आधुनिक पर्यावरणवादी शब्दावली में सीधे रख देना ऐतिहासिक रूप से अतिरंजित होगा। फिर भी यह कहा जा सकता है कि उनका आर्थिक चिंतन सीमित उपभोग, स्थानीय उत्पादन, मानव-केंद्रित तकनीक और प्रकृति के साथ संतुलन को महत्व देता था।

तिवारी (2019) ने गांधी के पर्यावरण-संबंधी विचारों को सादगी, संयमित उपभोग, प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व और ग्राम-आधारित जीवन-पद्धति से जोड़ा है। उनके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि गांधी का विकास-दृष्टिकोण असीमित उपभोग के स्थान पर आवश्यकता-आधारित जीवन, स्थानीय संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग और प्रकृति के साथ संतुलित संबंध पर बल देता है। घई (2016) भी गांधीवादी चिंतन को टिकाऊ विकास की एक पूर्ववर्ती नैतिक रूपरेखा के रूप में देखते हैं, जिसमें आर्थिक प्रगति के साथ सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय संतुलन को समान

महत्व दिया गया है। कृपलानी इसी व्यापक बौद्धिक परंपरा के सक्रिय राजनीतिक प्रतिनिधि थे। उनकी चिंता यह थी कि विकास की प्रक्रिया इतनी केंद्रीकृत और विशाल न हो जाए कि व्यक्ति, गाँव और स्थानीय समुदाय निर्णय लेने की प्रक्रिया से बाहर हो जाएँ। इसलिए वे ऐसे विकास के पक्षधर थे जिसमें स्थानीय भागीदारी, मानवीय गरिमा, सामाजिक उत्तरदायित्व और संसाधनों के संतुलित उपयोग को प्रमुख स्थान प्राप्त हो।

X. ग्राम स्वराज और लोकतांत्रिक भागीदारी

कृपलानी के लिए विकेंद्रीकरण का एक राजनीतिक अर्थ भी था। उनका मानना था कि लोकतंत्र केवल राष्ट्रीय और प्रांतीय चुनावों से पूरा नहीं होता। यदि नागरिक रोजमर्रा के प्रशासन, संसाधन-वितरण और स्थानीय विकास में भाग नहीं लेता, तो लोकतंत्र दूरस्थ संरचना बन सकता है। पराशर (2022) का विश्लेषण गांधीवादी लोकतंत्र में केवल प्रतिनिधियों के माध्यम से संचालित होने वाली लोकतांत्रिक व्यवस्था की सीमाओं को रेखांकित करता है। उनके अनुसार, लोकतंत्र को अधिक जीवंत और प्रभावी बनाने के लिए स्थानीय स्तर पर प्रत्यक्ष जनभागीदारी और सहभागी संस्थाओं का विकास आवश्यक है। इसी प्रकार, जियानोला (2015) ने स्वराज की अवधारणा को केवल प्रतिनिधिक लोकतंत्र तक सीमित नहीं माना, बल्कि उसे सहभागी लोकतंत्र के विस्तार के रूप में देखा है। इस दृष्टिकोण में जनता केवल चुनाव के समय मतदाता की भूमिका नहीं निभाती, बल्कि स्थानीय निर्णय-प्रक्रिया, सामुदायिक शासन और सार्वजनिक जीवन में निरंतर भागीदारी करती है। इस प्रकार, दोनों अध्ययनों में लोकतंत्र को अधिक विकेंद्रीकृत, सहभागी और जनकेंद्रित बनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

इस संदर्भ में कृपलानी के विचार को आधुनिक पंचायती राज से यांत्रिक रूप से समान नहीं माना जाना चाहिए। आज का पंचायती राज संविधान, राज्य कानून, आरक्षण, वित्त आयोगों और प्रशासनिक तंत्र के भीतर काम करता है, जबकि कृपलानी की कल्पना अधिक व्यापक सामाजिक स्वशासन की थी। फिर भी दोनों के बीच एक वैचारिक सूत्र है—निर्णय की शक्ति नागरिक के जितना निकट होगी, लोकतांत्रिक भागीदारी की संभावना उतनी बढ़ सकती है।

XI. कृपलानी के वैकल्पिक विकास दृष्टिकोण की सीमाएँ

कृपलानी के विचारों की चर्चा केवल प्रशंसा के रूप में करना उचित नहीं होगा। उनके ग्राम-केंद्रित विकास मॉडल के सामने कई व्यावहारिक प्रश्न थे। बड़े पैमाने की आधारभूत संरचना, आधुनिक स्वास्थ्य सेवाएँ, विश्वविद्यालय, भारी इंजीनियरिंग, राष्ट्रीय ऊर्जा व्यवस्था और रक्षा उत्पादन जैसे क्षेत्रों में स्थानीय स्वावलंबन पर्याप्त समाधान नहीं हो सकता। इसी तरह सभी गाँव सामाजिक रूप से समान या लोकतांत्रिक नहीं होते; स्थानीय स्तर पर जाति, लिंग और संपत्ति आधारित शक्ति-संबंध भी असमानता पैदा कर सकते हैं। इसलिए विकेंद्रीकरण अपने आप सामाजिक न्याय की गारंटी नहीं देता।

आधुनिक शोध भी यही सावधानी सुझाता है। स्थानीय लोकतंत्र के परिणाम इस बात पर निर्भर करते हैं कि संस्थाएँ कितनी समावेशी हैं, वित्तीय अधिकार कितने वास्तविक हैं और हाशिये के समूह निर्णय-प्रक्रिया में कितनी प्रभावी भागीदारी कर पाते हैं। इस दृष्टि से कृपलानी की ग्राम स्वराज अवधारणा को एक पूर्ण तैयार प्रशासनिक मॉडल की बजाय नैतिक और राजनीतिक दिशा-सूचक के रूप में पढ़ना अधिक उचित है।

XII. समकालीन संदर्भ में प्रासंगिकता

आज भारत में स्थानीय शासन, सहकारी अर्थव्यवस्था, सूक्ष्म उद्यम, ग्रामीण रोजगार, टिकाऊ विकास और समुदाय-आधारित संसाधन प्रबंधन पर व्यापक चर्चा है। इन प्रश्नों पर कृपलानी के विचार सीधे नीति-निर्देश नहीं देते, पर वे कुछ मूलभूत प्रश्न सामने रखते हैं: विकास का लाभ किसे मिलता है? निर्णय कहाँ लिए जाते हैं? स्थानीय समुदायों की भूमिका कितनी है? रोजगार और उत्पादन के बीच संतुलन कैसा है? और आर्थिक प्रगति का सामाजिक तथा पर्यावरणीय मूल्य क्या है?

इन प्रश्नों की उपयोगिता इसलिए है कि वे विकास की अवधारणा को केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित न रखकर उसे सामाजिक न्याय, जनभागीदारी, स्थानीय स्वायत्तता और लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व से जोड़ते हैं। खुंद्रकपम और सरमाह (2023) नागरिक-केंद्रित प्रशासन की चर्चा करते हुए गांधीवादी विकेंद्रीकरण की उपयोगिता को रेखांकित करते हैं। उनके अनुसार, शासन व्यवस्था को अधिक प्रभावी और जनोन्मुख बनाने के लिए स्थानीय स्तर पर नागरिकों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। इसी प्रकार, पाटिल और सिन्हा (2022) स्थानीय समुदायों पर आधारित स्वशासन की व्यावहारिक संभावनाओं को स्पष्ट करते हैं। उनका अध्ययन यह संकेत देता है कि सामुदायिक सहमति, स्थानीय निर्णय-प्रक्रिया और सहभागी शासन के माध्यम से गांधीवादी ग्राम स्वराज की अवधारणा को व्यवहार में समझा जा सकता है। इस प्रकार, कृपलानी का गांधीवादी समाजवाद वर्तमान समय के लिए किसी निश्चित और तैयार समाधान के रूप में नहीं, बल्कि विकास, लोकतंत्र, विकेंद्रीकरण और जनभागीदारी के आपसी संबंधों पर पुनर्विचार करने वाले एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक और वैचारिक स्रोत के रूप में उपयोगी दिखाई देता है।

XIII. निष्कर्ष

आचार्य जे. बी. कृपलानी का गांधीवादी समाजवाद स्वतंत्र भारत के आरंभिक विकास-विमर्श की एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक धारा का प्रतिनिधित्व करता है। उनके विचार का केंद्र ग्राम स्वराज, राजनीतिक और आर्थिक विकेंद्रीकरण, स्थानीय उत्पादन, रोजगार, सामाजिक समानता और नैतिक उत्तरदायित्व था। उन्होंने गांधीवाद को स्थिर परंपरा के रूप में नहीं, बल्कि आधुनिक भारत की समस्याओं के संदर्भ में प्रयोग योग्य विचार-पद्धति के रूप में देखा।

नेहरूवादी केंद्रीकृत औद्योगिक विकास से उनका मतभेद भारतीय राजनीति में विकास के दो अलग मार्गों की बहस को स्पष्ट करता है। कृपलानी के मॉडल की व्यावहारिक सीमाएँ थीं, और आधुनिक जटिल अर्थव्यवस्था को केवल ग्राम-आधारित संरचना से संचालित करना संभव नहीं माना जा सकता। फिर भी उनके प्रश्न आज भी महत्वपूर्ण हैं, विशेषकर स्थानीय लोकतंत्र, रोजगार, विकेंद्रीकरण, पर्यावरणीय संतुलन और समुदाय की निर्णय-क्षमता के संदर्भ में। उनके विचारों का ऐतिहासिक महत्व इसी में है कि उन्होंने विकास को सत्ता, नैतिकता और मानव गरिमा के प्रश्नों से जोड़कर देखा।

References

- [1] बोरा, पी. (2012). गांधी के ग्राम स्वराज का अधूरा एजेंडा: असम में पंचायती राज की वर्तमान स्थिति। मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान शोध, 2(5)।

- [2] चक्रवर्ती, बी. (2014). सार्वभौमिक हित: गांधी के न्यासिता सिद्धांत का पुनर्मूल्यांकन। आधुनिक एशियाई अध्ययन, 48(4), 1016–1043।
- [3] घई, एस. (2016). सतत विकास के अग्रदूत के रूप में गांधी। एकेडेमिशिया: एक अंतरराष्ट्रीय बहुविषयक शोध पत्रिका, 6(3), 263–267।
- [4] जियानोला, सी. (2015). महात्मा गांधी और आम आदमी पार्टी: विकेंद्रीकरण और स्वराज के माध्यम से उत्तर-राजनीतिक उपनिवेशवाद की ओर। इंटरनेशनल कोलोक्वियम एपिस्टेमोलॉजीज़ ऑफ द साउथ की कार्यवाही, 921–937।
- [5] खिमटा, ए. सी. (2021). भारत में विकेंद्रीकृत शासन: एक गांधीवादी दृष्टिकोण। प्रशासनिक विकास: हिमाचल प्रदेश लोक प्रशासन संस्थान की शोध पत्रिका, 7(2), 59–82।
- [6] खुंद्रकपम, पी., एवं सरमाह, जे. के. (2023). विकेंद्रीकरण के माध्यम से नागरिक-केंद्रित प्रशासन की ओर: स्वतंत्र भारत के लिए गांधीवादी संविधान से प्राप्त शिक्षाएँ। भारतीय लोक प्रशासन पत्रिका, 69(3), 571–583।
- [7] कोठारी, आर. (1964). भारत में कांग्रेस 'व्यवस्था'। एशियन सर्वे, 4(12), 1161–1173।
- [8] कुमार, पी. (2024). भारत के लिए सतत जीवन के विकेंद्रीकृत मॉडल का अनुप्रयोग और परिणाम: गांधीवादी ग्रामीण विकास मॉडल के संदर्भ में। गिब्स लॉ जर्नल, 6(1), 22–32।
- [9] ली, ई. (2008). पंचायत व्यवस्था के संस्थानीकरण पर गांधी का प्रभाव और उनकी राजनीतिक विचारधारा: ग्राम स्वराज। दक्षिण एशियाई अध्ययन पत्रिका, 14(1), 81–113।
- [10] माथुर, के. (2015). विकेंद्रीकरण की गांधीवादी अवधारणा। अनुप्रयुक्त शोध की अंतरराष्ट्रीय पत्रिका, 1(2), 247–249।
- [11] पराशर, टी. (2022). संसद से आगे: गांधीवादी लोकतंत्र और उत्तर-औपनिवेशिक राष्ट्र-स्थापना। राजनीतिक सिद्धांत, 50(6), 893–920।
- [12] पाटिल, पी. वी., एवं सिन्हा, एस. (2022). वर्तमान संदर्भ में गांधीवादी सहमति-आधारित लोकतंत्र, सत्याग्रह और ग्राम समाजवाद के विचारों एवं व्यवहार का पुनराविष्कार: भारत के मेंढा लेखा गाँव का अध्ययन। विद्यापीठ, 60(1)।
- [13] शेरमैन, टी. सी. (2016). क्या साम्यवाद के खतरे का गांधीवादी उत्तर था? भारत में सर्वोदय और उत्तर-औपनिवेशिक राष्ट्रवाद। भारतीय आर्थिक एवं सामाजिक इतिहास समीक्षा, 53(2), 249–270।
- [14] तिवारी, आर. आर. (2019). एक पर्यावरणविद् के रूप में गांधी। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान पत्रिका, 149(पूरक 1), एस141–एस143।